International Journal of Multidisciplinary Trends

E-ISSN: 2709-9369
P-ISSN: 2709-9350
www.multisubjectjournal.com
IJMT 2023; 5(9): 18-20
Received: 12-07-2023
Accepted: 17-08-2023

राजीव कुमार
शोधार्थी, इतिहास एंव पुरातत्व विभाग, चौधरी देवी लाल विश्वविद्यालय, सिरसा, हरियाणा, भारत

डॉ. नीलम रानी
सहायक प्रोफेसर, इतिहास एवं पुरातत्व विभाग, चौधरी देवी लाल विश्वविद्यालय, सिरसा, हरियाणा, भारत

डॉ. प्रवीन कुमार
सहायक प्रोफेसर, इतिहास एवं पुरातत्व विभाग, चौधरी देवी लाल विश्वविद्यालय, सिरसा, हरियाणा, भारत

Corresponding Author:
राजीव कुमार
शोधार्थी, इतिहास एंव पुरातत्व विभाग, चौधरी देवी लाल विश्वविद्यालय, सिरसा, हरियाणा, भारत

राजनीतिक विकास में छात्र संघ चुनाव की भूमिका

राजीव कुमार, डॉ. नीलम रानी, डॉ. प्रवीन कुमार

DOI: https://doi.org/10.22271/multi.2023.v5.i9a.335

सारांश
विश्व राजनैतिक पटल पर विकाश का प्रारम्भ कॉलेज एवं विश्वविद्यालय परिसर से होता है। छात्र–छात्राओं के संगठन वैश्वीक राजनीति को प्रभावित करते हैं। जिसका सबसे बेहतरीन नमूना भारतीय आजादी के आन्दोलन में देखने को मिलता है। जिसमे लाखों की संख्या में छात्रों ने गाँधी जी के आह्वान पर स्कूल एवं कॉलेजों का बहिष्कार किया। जिससे ब्रिटिश साम्राज्य की जड़ें हिलने लगी और अंग्रेजी हुकुमत को अपने फैसले बदलने के लिए मजबूर होना पड़ा। इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य छात्र राजनिति, छात्र संघ चुनाव एवं संस्थानों से सम्भावित राजनैतिक विकाश को समझना है।

कुटशब्दः छात्र संघ, राजनीतिक विकास, विश्वविद्यालय, राजनैतिक परिवर्तन।

प्रस्तावना
प्रत्येक समूह के लिए नेतृत्व की आवश्यकता होती है। चाहे वह राजनैतिक हो या सामाजिक, धार्मिक हो या औद्योगिक कोई भी समूह बिना नेतृत्व के अस्तित्वहीन होता है। औद्योगिक क्षेत्र में मालिक या कर्मचारी ही नेता का चयन करते है। जबकि होना यह चाहिए कि मालिक और कर्मचारी दोनों मिलकर नेता का चुनाव करें। इस प्रकार की आदर्श चयन प्रणाली के द्वारा मालिक और कर्मचारी के बीच के छोटे–छोटे झगड़ों को रोका जा सकता है। इससे समस्याओं का समाधान भी जल्दी हो सकता है। मालिकों तथा प्रबंधकों द्वारा चुना नेता अधिक स्वामि–भक्ति रखता है और साथियों के हितों को उपेक्षित कर सकता है। इसके विपरीत सथियों द्वारा चुना व्यक्ति साथियों के प्रति उत्तरदायी होता है। इस प्रकार नीति संघर्ष बढ़ने लगता है। इसलिए प्रभावशाली नेतृत्व के लिए आवश्यक है कि मालिक और कर्मचारी दोनों मिलकर योग्य, अनुभवी और व्यवहार कुशल व्यक्ति को नेता चुनें।

राजनीतिक विकास
'राजनीतिक विकास' अवधारणा के संबंध में 'सिद्धान्त निर्माण' की प्रक्रिया का प्रारंभ प्रायः 1960 से माना जाता है जब आमण्ड और कोलमैन की कृति 'दि पॉलिटिक्स ऑफ दि डेवलेपिंग एरियाज' प्रकाशित हुई। राजनीतिक विकास के क्षेत्र में सिद्धान्त निर्माण की खोज का काम 1963 में प्रारंभ हुआ जब आमण्ड़ की अध्यक्षता में तुलनात्मक राजनीति की समिति' की स्थापना की गई जिसका कार्य राजनीतिक विकास और इससे सम्बन्धित अध्ययन के क्षेत्र में काम करने वाले प्रमुख सिद्धांतों को एकजुट करना था। इस समिति के तत्त्वाधान में प्रिंसटन विश्वविद्यालय प्रेस से राजनीतिक विकास के विभिन्न पक्षों पर छः मानक ग्रंथ प्रकाशित हुए जिनका संबंध राजनीतिक विकास के विविध आयामों से था। इस विषय के प्रारंभिक लेखकों में लुसियन पाई नामक व्यक्ति था, ये वह व्यक्ति था जिसने राजनीतिक विकास की संकल्पना का वैज्ञानिक विश्लेषण किया और इस विषय पर प्रकाशित समस्त साहित्य को सर्वाधिक प्रभावित किया।
राजनीतिक विकास की अवधारणा ने राजनीतिक व्यवस्थाओं के विवेचन तुलना स्पष्टीकरण और उनके बारे में भविष्यवाणिया करने के आधार स्थापित करने में सहायता की है। राजनीतिक विकास की अवधारणा ने राजनीतिक व्यवस्थाओं के अतीत के आधार पर वर्गीकरण और तुलना को संभव बनाया है इससे भविष्य में उत्पन्न होने वाली समस्याओं के समाधान ढूंढने में सहायता मिल सकती है।
राजनीतिक विकास की अवधारणा ने राजनीतिक व्यवस्थाओं के अर्थपूर्ण मानदंडों के आधार पर तुलना को संभव बनाया है। राजनीतिक विकास की अवधारणा ने राजनीतिक व्यवस्था के सामान्यीकरण में सहायता दी है। राजनीतिक विकास की अवधारणा ने व्यवहारवादी अध्ययन और क्षेत्रीय अध्ययनों में तालमेल बिठाने का प्रयास किया है। इससे एक दूसरे के परिणाम स्पष्ट हो जाते हैं।

छात्र संघ चुनाव
भारत को विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र होने का गौरव प्राप्त है। इसमें कोई दो राय नहीं की छात्र संघ लोकतंत्र के बुनियाद को मजबूत करता है, क्योंकि इससे जनता का राजनीतिक प्रशिक्षण

सुनिश्चित होता है और नेतृत्व क्षमता विकसित होती है। देश के करीब 300 विश्वविद्यालय और 15000 कॉलेजों में से 80 फीसदी विश्वविद्यालयों में छात्र संघ नहीं है अनेक राज्यों ने छात्र संघों के चुनाव पर प्रतिबंध लगा दिए है। यह अपने आप में विरोधाभासी प्रतीत होता है कि एक तरफ तो आप 18 वर्ष की उम्र के छात्र–युवकों को जन–प्रतिनिधि चुनने हेतु वोट देने का अधिकार देते हैं और वहीं दूसरी ओर छात्र संघ चुनाव पर रोक लगा दी जाती है। इससे बड़ी विड़म्बना क्या हो सकती है कि देश का छात्र संसद और लोकसभा के लिए जन–प्रतिनिधि चुन सकता है लेकिन अपने कॉलेज में छात्र प्रतिनिधि नहीं चुन सकता।

छात्र संघ चुनाव के विरोध में सरकार और विश्वविद्यालय प्रशासन की ओर से आरोप लगाए जाते हैं कि इसमें धनबल और बाहुबल का बोलबाला हो गया है तथा इससे पढ़ाई का माहौल दूषित होता है यहाँ प्रश्न उठता है कि बिहार में लगभग 25 वर्षों से छात्र संघ चुनाव नहीं हुए तो क्या यहां के विश्वविद्यालय परिषर हिंसा मुक्त हो गए हैं? और दिल्ली विश्वविद्यालय, जहां प्रतिवर्ष छात्र संघ चुनाव होते हैं वहां की शिक्षा व्यवस्था ध्वस्त हो गई है? बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में पिछले 15 सालों से प्रत्यक्ष छात्र संघ चुनाव पर रोक लगी है। तो क्या इससे स्थिति ठिक हो जाएगी?

लिंग्दोह समिति की सिफारिशे

सर्वोच्च न्यायालय ने छात्र संघ चुनाव में सुधार को लेकर लिंग्दोह समिति का गठन किया था जिसकी सिफारिशें छात्र संघ चुनाव के लिए अनिवार्य हो गई है इस समिति के मुताबिक एक प्रत्याशी केवल पांच हजार ही खर्च कर सकता है और वह दोबारा चुनाव नहीं लड़ सकता। उसकी उम्र 25 वर्ष तक होनी चाहिए, यदि शोध छात्र हो तो उसकी उम्र 28 वर्ष तक हो सकती है, मुद्रित पोस्ट पर रोक लगे, इत्यादि। जे एन यू एक कंपैक्ट कैम्पस है इसलिए वहां पांच हजार रूपये में प्रचार हो सकता है। लेकिन, दिल्ली विश्वविद्यालय जिसके छात्र संघ से संबंधित 51 कॉलेज दिल्ली भर में फैले हैं महज पांच हजार रूपये में प्रचार कैसे संभव हो सकता है? लगभग चार दशकों तक नियमित रूप से संपन्न हुए जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (जेएनयू) छात्र संघ चुनाव, जहां समूचे चुनाव का प्रबंधन छात्रों के हाथों में ही होता है और जिसे आदर्श छात्र संघ माना जाता है, इस समिति की सिफारिशों के चलते ही स्थगित है।

विश्वविद्यालय परिसर में राजनैतिक गतिविधियां

भारत में छात्र आंदोलनों का एक गौरवमयी इतिहास है। छात्रों ने हमेशा समाजिक एवं राजनैतिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। गौरतलब है कि स्वतंत्रता आन्दोलन में भी छात्रों ने बढ़–चढ़कर भाग लिया। महात्मा गांधी के आहवान् पर लाखों छात्रों ने अपने कैरियर को दांव पर लगाते हुए स्कूल और कॉलेजों का बहिष्कार किया। वर्ष 1973 में गुजरात विश्वविद्यालय में मैस खर्च की राशि बढ़ाए जाने के विरोध में छात्र आंदोलन हुआ और अगले साल 1974 में बिहार में शुल्क वृद्धि के खिलाफ छात्रों ने आंदोलन प्रारंभ किया। बाद में यह राष्ट्रव्यापी आंदोलन हो गया। तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी द्वारा देश पर थोपे गए आपातकाल को इसी आंदोलन के बूते चुनौती दी गई और व्यवस्था परिवर्तन साकार हुआ।

सन 1988 में बोफोर्स कांड को लेकर भ्रष्टाचार के विरोध में देश भर में छात्र संगठनों द्वारा संघर्ष चलाया गया। दिल्ली विश्वविद्यालय छात्र संघ की पहल पर विश्वनाथ प्रताप सिंह की विशाल आम सभा दिल्ली विश्वविद्यालय में हुई। नब्बे के दशक में शिक्षा के व्यवसायीकरण के विरोध में छात्रों ने कैंपसों में अभियान चलाया जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में निजीकरण के खिलाफ सशक्त आंदोलन खड़ा हुआ। 21वीं सदी के प्रारंभ में सन 2002 में शिक्षा और रोजगार के सवाल को लेकर विद्यार्थी परिषद के बैनर तले 75 हजार छात्रों ने संसद के सामने दस्तक दी।

हमारे विश्वविद्यालय परिसर राजनीति के केंद्र बन गए है, इससे इनकार नहीं किया जा सकता। छात्र राजनीति कभी मूल्यों के आधार पर होती थी। छात्र राजनीति से निकले तमाम नेता आज देश के बड़े पदों पर है, तब छात्र राजनीति का एक सृजनात्मक रूप भी दिखता था। लेकिन आज हालात बदल गए है। राजनीतिक प्रशिक्षण की परंपरा लगभग लुप्त है। लोग कैसे और क्यों राजनीति में आ रहे है कहा नहीं जा सकता। इंदौर में अहिल्यादेवी विश्वविद्यालय में कांग्रेस सांसद राहुल गांधी के प्रवास ने काफी हलचल मचा दी। सरकार ने इस मामले पर विश्वविद्यालय को नोटिस जारी कर दिया। राहुल गांधी का विश्वविद्यालय परिसर में जाना गलत है या सही इसका कोई सीधा जवाब नहीं हो सकता। अपनी बात कहने के लिए लोकतंत्र में सबको हक है, चाहे वह कोई भी क्यों ना हो। विश्वविद्यालय परिसरों में विमर्श का वातावरण, संवाद बहाल हो, मुद्दों पर बात हो यह बहुत अच्छी बात है बशर्ते यह किसी दल के आधार पर नहीं होना चाहिए।

शिक्षा केन्द्रों की अपनी एक दुनिया है, और वे व्यापक दुनिया का हिस्सा भी है। व्यवस्था की यथास्थिति को बरकरार रखने के लिए, इस छोटी दुनिया से ही कुछ छंटे हुए लोग निकलते हैं। प्रचलित राजनीति, सामाजिक मूल्य, मानवाधिकारों की स्थिति और सत्ता सन्तुलन का प्रतिबिम्ब इस छोटी दुनिया में भी दिखाई देता है। आभिजात्य वर्ग के निर्माण के लिए छँटनी के कई स्तर यहाँ सिर्फ परीक्षा द्वारा नहीं बने हैं। जाति, वर्ग, क्षेत्र व भाषा के भेदों को दमन के आधार व स्तरीकरण के लिए इस्तेमाल किया जाता है। बाजार में मांग के अनुपात में भी प्रशासन इस छोटी सी दुनिया के भीतर अलग–अलग स्तर का दमन करता है।

छात्रसंघों और छात्र राजनीति के संदर्भ में व्यापक जन राजनीति के कर्णधारों, नौकरशाहों, शिक्षाशास्त्रियों तथा न्यायपालिका की धारणाएं जमाने के हिसाब से बदलती रही है। भारतीय विश्वविद्यालयों में छात्रसंघों की स्थापना के प्रारंभिक दौर में अक्स्फोर्ड और कैम्ब्रिज की तर्ज पर उनका प्राथमिक उद्देश्य, वाद– विवाद, कवि सम्मेलन, नाटक आदि आयोजित करना था। राष्ट्रीय आन्दोलन का संघर्ष तेज होने के साथ–साथ छात्रसंघ अंग्रेजों की आँखों की किरकिरी बनते गए। छात्रसंघों द्वारा राष्ट्रीय नेताओं की बैठकें आयोजित की जाती थी। कई छात्रसंघों को निलम्बित किया गया। अक्टूबर 1936 में लिखे 'विद्यार्थी और राजनीति' शीर्षक के लेख में पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने विद्यार्थियों के राजनीति में सक्रिय होने के पक्ष में कई मजबूत तर्क दिए। शिक्षा जगत में व्याप्त तानाशाही के वातावरण पर टिप्पणी करते हुए वे कहते हैं'' सिर्फ शिक्षा में ही नहीं बल्कि हिन्दुस्तान में हर जगह दिखावटी और अक्सर खाली–मगज–सत्ता लोगों को अपने ही तरीके के ढाँचे में ढालने की कोशिश करती है और दिमाग की तरक्की तथा विचारों के फैलाव को रोकती है। सत्ता की यह भावना हमारे विश्वविद्यालयों में व्याप्त है और अनुशासन के नाम पर वह उन सबको कुचल डालती है जो चुपचाप उनके हुक्म को नहीं मान लेते। वे ताकतें उन गुणों को पसंद नहीं करतीं जिन्हें आजाद मुल्कों में प्रोत्साहन दिया जाता है।''

स्वतंत्रता के बाद डा० राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का गठन हुआ। इस आयोग के अनुसार, छात्रसंघ का निचोड़ है कि वह छात्रों की, छात्रों द्वारा तथा छात्रों के लिए गठित संस्था है जिसमें विश्वविद्यालय प्रशासन का कोई हस्तक्षेप न हो।

छठें दशक की शुरुआत में जब फिर एक बार छात्रों को राजनीति से विरत रहने का उपदेश दिया गया तब, राममनोहर लोहिया ने स्कूली बच्चों से ''चाचा नेहरू जिन्दाबाद'' के नारे लगवाने की

राजनीति का उल्लेख किया। यह गौरतलब है कि 1936 के अपने लेख में स्वयं नेहरू ने सरकार समर्थन को राजनीति न मानने वालों पर व्यंग्य किया था।

छात्रों के प्रेरणा स्त्रोत के रूप में भगत सिंह के विचार

भगत सिंह के लेख के 95 वर्ष एवं भारत की ब्रिटिश दासता से मुक्ति के 76 वर्ष बाद भी युवा वर्ग को मानसिक गुलामी का पाठ पढ़ाने का, वंशानुगत राजनैतिक चाकरी करवाने का दुष्चक्र रचा गया। एक पत्र के अनुसार छात्र–संघ को बहाल न करना तथा अपने दल में छात्र व युवा संगठन रखना राजनैतिक दास बनाने के समान नहीं तो ओर क्या है। क्रांतिकारियों के बौद्धिक नेता भगत सिंह ने अपने इसी लेख में आगे लिखा 'सभी मानते है कि हिन्दुस्तान को इस समय ऐसे देश सेवकों की जरूरत है, जो तन–मन–धन देश पर अर्पित कर दे और पागलों की तरह सारी उम्र देश की आजादी के लिए न्यौछावर कर दें। लेकिन क्या वृद्ध लोगों में ऐसे आदमी मिल सकेंगे। क्या परिवार और दुनियादारी के झंझटों में फँसे समझदार लोगों में से ऐसे लोग निकल सकेंगे। यह तो वही नौजवान निकल सकते हैं जो किन्ही जंजालों में न फँसे हों और जंजालों में पड़ने से पहले विद्यार्थी या नौजवान तभी सोच सकते है यदि उन्होंने कुछ व्यावहारिक ज्ञान भी हासिल किया हो।'

राजनीतिक आधुनिकीकरण

इस दृष्टिकोण की धारणा है कि राजनीतिक विकास और राजनीतिक आधुनिकीकरण समानार्थक शब्द है। अर्थात् जितना राजनीतिक आधुनिकीकरण होगा उतना ही राजनीतिक विकास होगा। यह दृष्टिकोण सम्पन्न औद्योगिक राष्ट्रों को विशेषकर पश्चिमी राष्ट्रों को सामाजिक और आर्थिक जीवन के ''फैशन निर्माता'' या निर्धारक मानता है। इसका मानना है कि विकासशील देश जितनी मात्रा में पश्चिमी आधुनिक देशों का अनुसरण करते हैं उतनी ही मात्रा में वहाँ राजनीतिक विकास होता है अर्थात् प्रजातन्त्र, प्रजातान्त्रिक संस्थाओं, योग्यता पर आधारित व्यवस्थाओं, स्वतंत्रता और समानता का विकास होता है। जेम्स एस. कौल, कार्ल डायश और एस. एम. लिप्सटे जैसे राजनीतिक विचारक इसी दृष्टिकोण का समर्थन करते है।

राजनीतिक विकास के कुछ प्रतिपादकों द्वारा यह स्वीकार किया जाता है कि विकास आगे बढ़ने की अवस्था है जबकि हन्टिंगटन और रिग्स जैसे लेखकों का मत है कि यह केवल आगे बढ़ने की अवस्था नहीं, यह उलट भी सकती है अर्थात् इसका हास हो सकता है। उदाहरणतः एशिया, अफ्रीका और लेटीन अमरीका के अनेक देशों में प्रजातान्त्रिक व्यवस्थाओं के विकास के स्थान पर उनका हृास हुआ है। अनेक देश प्रजातान्त्रिक व्यवस्थाओं को खर्चीला समझते हैं। इन देशों ने आधुनिक संरचनाओं के स्थान पर एकदलीय व्यवस्था और केन्द्रीकरण पर अधिक जोर दिया है।

निष्कर्ष

राजनीतिक विकास की अवधारणा ने तीसरे विश्व के देशों को राजनीतिक व्यवस्थाओं के अध्ययन पर बल देकर आनुभविकशोध के क्षेत्र को व्यापक बनाया है। राजनीतिक विकास की अवधारणा ने पश्चिम के अंधानुकरण के स्थान पर विकासशील देशों को अपने मार्ग (मॉडल) अपनाने की प्रेरणा दी है। राजनीतिक विकास की अवधारणा ने भिन्न–भिन्न राजनीति के विद्वानों को एक–दूसरे के निकट ला दिया है। इससे तुलनात्मक राजनीतिक का क्षेत्र व्यापक बना है और उसे नये आयाम, नये क्षेत्र, नयी प्रविधियाँ और परिप्रेक्ष्य प्राप्त हुए है।

संदर्भ

1. कुमार, अमर (2010), एकेडमिक पालिटिक्स एण्ड स्टुडैन्ट अनरैस्ट, टरमोइल एण्ड ट्रांजिसन, फिलिफ जी – अल्टबैक, मुम्बई, पृ० सं० 24–25
2. सरसिकर, वी० एम० (1962), सोशल एण्ड पालिटिकल ऐटिटयूडस ऑफ पोस्ट – ग्रेजुएट स्टुडेन्टस ऑफ द युनिवर्सिटी ऑफ पुणे 1960 – 61, पुणे विश्वविद्यालय प्रेस, पुणे, पृ० सं० 116–117
3. सिंह, अमर कुमार (2009), ऐकेडमिक पालाटिक्स एण्ड स्टुडैन्ट अनरैस्ट : द केश ऑफ रांची युनिवर्सिटि, फिलिप जी अल्टबैक, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बॉम्बे, पृ० सं० 219
4. बिंदर, एल० एट ऑल (1971), क्राईसिस एण्ड सिकवेन्सस इन पालिटिकल डैवैल्पमैन्ट, प्रिन्सटॉन विश्वविद्यालय प्रैस, प्रिन्सटॉन, पृ० सं० 136–137
5. ब्रेजेजिनसकी, जैड० एण्ड हुंगटिंगटॉन एस० पी० (1964), पॉलिटिकल पावर : यू०एस०ए० / यू०एस०एस०आर०, न्यूयॉर्क, विकिंग प्रेस, पृ० सं० 196–197
6. पये, एल० डब्लु० (1966), आस्पैक्ट ऑफ पॉलिटिकल डेवेल्पमैन्ट, लिटल, ब्राऊन एण्ड कम्पनी, बुस्टन पृ० सं० 118–119
7. बुन्से, वी० (2000), कॉम्पेरेटिव डेमोकरेटीजेस्न : बिग एण्ड बाऊन्डीड जैनरलाईजेसन, कॉम्पेरेटिव, पृ० सं० 302–304
8. पॉलिटिकल सटडीज, नं० 33, अगस्त – सितंबर, 1985
9. इस्टॉन, डी० (1965), ए सिस्टम एनालिसिस ऑफ पॉलिटीकल लाईफ : न्यूयॉर्क, लंडन, सिडनी, जॉन विल्ले एण्ड सन्स, पृ० सं० 148–149